# ( 165 ) जब आवे संतोष धन, सब धन धूरि समान

**संकेत बिंदु**—(1) सूक्तिकार का मत (2) सुख की जननी संतोष (3) अत्यधिक धन दुख का कारण (4) संतोष साम्राज्य से भी बढ़कर (5) संतोष का फल मीठा और लाभदायक।

सूक्तिकार संतोष को ही परम धन मानकर इस विचार को प्रकट करता है कि इस धन के सम्मुख अन्य सभी धन धूल के समान अत्यन्त तुच्छ, हीन तथा उपेक्ष्य हैं। वह केवल रुपया, पैसा को ही धन नहीं मानता, अपितु यथेष्ट मात्रा में गऊ, हाथी, घोड़े होने को भी धन समझता है और बहुमूल्य पत्थर, माणिक्य, लाल को भी धन स्वीकारता है — *'गोधन, गजधन, बाजिधन और रतनधन खान।'*

Bihar Patna-16

★ संतोष क्या है ? वह मानसिक अवस्था, जिसमें व्यक्ति प्राप्त होने वाली वस्तु को पर्याप्त समझता है और उससे अधिक की कामना नहीं करता, संतोष है। महोपनिषद् के

CS CamScanner

मत में 'अप्राप्य वस्तु के लिए चिंता न करना, प्राप्त वस्तु के लिए सम रहना संतोष है।' कबीर का कथन है—

*चाह गई चिंता मिटी, मनुवा बेपरवाह।*
*जिसको कछु न चाहिए सोई साहंसाह।।*

जो चाहना, चिंता को छोड़कर, कामना रहित है, वही संतुष्ट है। *'बिन संतोष न कामा नसाहिं'* कहकर तुलसी भी कामना के नाश का कारण संतोष को ही मानते हैं। सारांशत: जो प्राप्त है, उसमें सम रहना, जो प्राप्त नहीं है उसकी चिंता न करना तथा कामना-तृष्णा का त्याग ही संतोष है; इस प्रकार संतोष एक ऐसी आनन्दमय और आध्यात्मिक संतुलित दशा का नाम है, जो शांत-सरोवर के अचल जल के समान निर्विकार रहती है। बड़े से बड़े आघात पर भी जिसमें हलचल या उथल-पुथल पैदा नहीं होती।

जीवन की चाहना क्या है? जीवन को सुख-पूर्वक भोगने की लालसा। सुख का निवास मन है। मन से आदमी सुख महसूस करता है। यही कारण है धनवान् अन्त:करण से दु:खी है और निर्धन धन-हीन होते हुए भी सुखी है। कारण, जो कुछ उसे मिल जाता है, जिससे वह सांसारिक भोग-सुख पाता है, उसी से संतुष्ट है, प्रसन्न है, सुखी है। 'सर्वे गुणा: कांचनमाश्रयन्ते' कहकर संसार के सभी गुणों का वास सुवर्ण अर्थात् धन में बताया गया है। उसे धन की गठरी बताया है, धर्माचरण का कारण माना है। उन्नति का पथ प्रशस्त करने वाला माना गया है। पूजनीय तथा वंदनीय समझा जाता है। पर 'न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्य:', अर्थात् धन से मनुष्य कभी तृप्त नहीं हुआ। अतृप्ति से इन्द्रियाँ बे-लगाम घोड़े की तरह भागती हैं। बे-लगाम इन्द्रियाँ मनुष्य के अन्तर्द्वन्द्व को तीव्र कर हृदय को अशांत करती हैं। अशांत हृदय में सुख कैसा? (अशान्तस्य कुत: सुखम्) सुख के अभाव में जीवन नरक है; सुख की जननी है संतोष। 'संतोषं परमं सुखम्।'

बहुमूल्य धन-सम्पत्ति का स्वामी, कोठी-कार और अतुल निधि का मालिक, भौतिक ऐश्वर्य का अधिकारी स्वभावत: निन्नानवे के फेर में रहता है। वह लखपति से करोड़पति और करोड़पति से अरबपति बनने के लिए अहर्निश चिंतित रहता है। कुछ और अधिक, कुछ और ज्यादा की मृग-तृष्णा में वह व्याकुल रहता है। इसी कारण उसकी नींद मारी जाती है। भूख घटती जाती है। दवाई के सहारे काया जीती रहती है। जो धन उसे सुख न पहुँचा सके, काया की अस्वस्थता उसे धर्माचरण से दूर करे, वह धन तुच्छ है। इसके मुकाबले उस व्यक्ति का जीवन अधिक सुखी है जो अपनी कामनाओं और तृष्णाओं को मर्यादित किये है। कारण, उसका धन तो संतोष है। जिसके सम्मुख और धन तुच्छ हैं।

दूसरी ओर यह नैसर्गिक सत्य है कि रुपया और पैसा, हीरा और मोती, स्त्री और भोजन, काम और कीर्ति रूपी धन से प्राणी अतृप्त रहकर चले गए। उनकी तृष्णा मिटी नहीं। प्रसाद का मनु भी कह उठता है—

*अरी उपेक्षा भरी अमरते, री अतृप्ति निर्बाध विलास।*
*द्विधा रहित अपलक नयनों की, भूल भरी दर्शन की प्यास॥*

इस प्यास में, तृष्णा में, कामना में अपेक्षापूर्ण अमरता में छटपटाहट है, अकुलाहट है, वेदना है। पर संतोष का धनी व्यक्ति तृष्णा की नदी को सहज ही पार कर देवराज इन्द्र के नन्दन-वन में भ्रमण करता है।

धन की चरमशक्ति है साम्राज्य। पर संतोष साम्राज्य से भी बढ़कर है। इसलिए शेक्सपीयर कहता है, मेरा मुकुट मेरे हृदय में है। मेरा मुकुट न हीरों से जड़ित है और न रत्नों से। मेरे मुकुट का नाम है संतोष। संतोष ही हमारी सर्वोत्तम सम्पत्ति है। (My crown is called content, our content is best having.)

संतोष का गुण है—*'रूखी सूखी खाय के ठंडा पानी पीव। देख पराई चूपड़ी मत ललचाए जीव'*, या तुलसी के शब्दों में *'जाहि बिधि राखे राम वाहि बिधि रहिए।'* भागवत का भी यह कथन है—'यथा देश, यथा काल, यथा भाग्य जो मिल जाए उसी से संतोष करना चाहिए।' कारण, जो भी घटित होता है, उससे मैं संतुष्ट हूँ क्योंकि मैं जानता हूँ कि परमात्मा द्वारा चयन मेरे चयन से अधिक श्रेष्ठ है।' —एपिक्टेरस (यूनानी दार्शनिक) जातक भी कहते हैं—'जो मिले उससे संतुष्ट रहना चाहिए। अति लोभ करना पाप है।' ईरान के फारसी कवि हाफिज भी इसी का समर्थन करते हैं, 'जो कुछ तुझे मिल गया है, उसी पर संतोष कर और सदैव प्रसन्न रहने की चेष्टा करता रह।'

संतोष रूपी धन का वृक्ष कड़ुआ है, तथापि इसका फल मीठा और लाभदायक है। शेखशादी ने गुलिस्ताँ में यही बात कही है; 'दिनों के फेर से तू खट्टा होकर मत बैठ, क्योंकि संतोष रूपी अमृत से संतुष्ट मनुष्य के लिए सतत सुख और शांति के द्वार सदा खुले रहते हैं।' स्वामी सच्चिदानन्द जी की तो मान्यता है 'जैसे हरा चश्मा लगा लेने से सभी वस्तुएँ हरी-हरी ही दीखती हैं, उसी प्रकार संतोष धारण कर लेने पर सारा संसार आनन्द रूप ही दिखाई पड़ता है।'

संतोष रूपी धन जिसके पास है उसकी आँखों की ज्योति में चमक होती है। स्वास्थ्य की लाली उसके कपोलों पर फूटती रहती है। कमल के समान उसका बदन खिला रहता है। चाँदनी-सी मुस्कराहट उसके अरुणाधर पर खेलती रहती है। उसके अंग-अंग में स्फूर्ति रहती है और भाल दीप्त रहता है। संस्कृत का एक सुभाषित है—

*संतोषामृत तृप्तानां यत्सुखं शान्त चेतसाम्।*
*कुतस्तद्धन लुब्धानामितश्चेश्च धावताम्॥*

संतोष रूपी अमृत से तृप्त शान्तचित्त व्यक्तियों को जो सुख प्राप्त है, वह धन के लोभ में इधर-उधर भटकने वालों को कहाँ प्राप्त हो सकता है।